समकालीन कला : एक सर्वेक्षण

श्रुतिकीर्ति तिवारी
इ0क0स0वि0वि0 खैरागढ़(छत्तीसगढ़)

कला निरन्तर प्रगतिशील एवं गतिशील रही है। कला मनुष्य के जीवन व संस्कृति का एक अंग है। इसके द्वारा प्राचीन संस्कृति, सभ्यता, परम्पराओं आदि का बोध होता है। अपनी परम्पराओं एवं संस्कृति को नई पीढ़ी में स्थानान्तरित करने का ये सबसे सरल एवं सफल माध्यम है। कला का स्वरूप परिवर्तन होता रहा है, समाज की सभ्यता एवं संस्कृति के विकास के साथ कला का विकास भी होता रहा है। कला सदैव ही समकालीन रही है किन्तु उसमें देश, काल, परिस्थितियों एवं मनुष्य के विचारों का प्रभाव उस पर समय–समय पर पड़ता रहा है, और उसमें अपेक्षित परिवर्तन भी संभव है। परम्परा–परिवर्तन–आधुनिका के धर्म को निभाते हुये भारतीय कला यहाँ तक पहुँची।

किसी भी देश की कला की विशेषता वहाँ के कला आन्दोलन, समाजिक जीवन, संस्कृति एवं परम्परा तथा चित्र रचना की प्रक्रिया एवं तकनीक पर निर्भर होती है। आधुनिक भारतीय कला पर भी इन्हीं विचार का प्रभाव परिलक्षित होता हैं समकालीन चित्रकला का जन्म पश्चिमी देशों से 19वीं शती के प्रारम्भ में माना जाता है। किन्तु भारतीय कलाकारों के द्वारा उसे अपनाये जाने का मुख्य कारण, अत्यन्त प्रबल रचनात्मक पक्ष, माध्यम की स्वतन्त्रता, स्वतन्त्र अस्तित्व, प्रयोगशीलता एवं कला के प्रति नवीन दृष्टिकोण आदि हो सकते हैं। कलाकार निरन्तर वैज्ञानिक खोजों की तरह एक अनूठे सृजन के निर्माण में लगा हुआ है। इसकी काल्पनिक प्रवृत्तियों ने इसे नवीन अनुसंधानों एवं वैज्ञानिक क्रिया–कलापों के लिये प्रेरित किया है, यही कारण है कि कला निरन्तर सूक्ष्म से सूक्ष्मतर होती जा रही है। समकालीन कला में आकृतियों का स्थान प्रतीकों एवं बिम्बों ने ले लिया है। जहाँ भाषा किसी अर्थ को स्पष्ट करने में असमर्थ हो जाती है, वहीं से चित्रकला प्रारम्भ होती है एवं मनुष्य के अर्न्तमन की भावनाओं को रूप तथा विस्तार मिलता है। वर्तमान की कला में सामाजिक जीवन की झलक अमूर्त रूप में मिलती है वह समकालीन तो है ही वह भविष्य के मार्ग को भी प्रशस्त करती है। कलाकार भविष्य के खोजों एवं सामाजिक परिस्थितियों की कल्पना भी करता है, तथा अपनी कला के माध्यम से अभिव्यक्ति करता है। वह उन सभी पहलुओं पर भी विचार करता है जो अदृश्य एवं अछूता है।

पाश्चात्य समकालीन कला जगत में जितने भी कला आन्दोलन हुये उन सब का प्रभाव भारतीय कलाकारों एवं भारतीय कला पर भी पड़ा। भारतीय कलाकारों ने पाश्चात्य कला एवं भारतीय कला के सम्मिश्रण से समकालीन कला का सूत्रपात किया। 1980ई0 से लेकर वर्तमान तक भारतीय कला कई रूपों से हो कर गुजरी। वर्तमान कला में कलाकारों की नवीन कला विधाओं एवं उनके गहन मानसिक संदर्भ की झलक मिलती है। समकालीन कलाकार अवचेतन मन को अपनी कलाकृतियों के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। विभिन्न तकनीकी माध्यमों के प्रयोग से उसमें विशिष्ट सौन्दर्य दृष्टि विकसित करता है। समकालीन कलाकृतियों में कभी–कभी ऐसे रहस्यात्मक तत्वों की उत्पत्ति होती है जो साधारणतया असंभव है।

समकालीन कला प्रतीकात्मक है, जैसे जीवन की पारदर्शिता को नग्नता द्वारा प्रदर्शित करना, कुण्ठा एवं विषाद को गहरे रंग एवं कटीले पौधों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। समकालीन कला एक तरह के परीक्षण के रूप में जटिल प्रयोगों के साथ मानव मन की अभिव्यक्ति है।

भारतीय चित्रों में प्रतीकों या संकेतों का प्रयोग प्राचीन काल से ही चला आ रहा है। कामसूत्र के अनुसार प्रेमी–प्रेमिका के चित्रों में प्रतीकों के द्वारा मनोभावों का आदान–प्रदान करते हैं।[1]

भारतीय समकालीन कला के आरम्भ की कोई निश्चित तिथि नहीं है। 19वीं शताब्दी के मध्य के तुरन्त बाद से ही कला ने एक आन्दोलन का रूप ले लिया। विज्ञान की क्रान्तिकारी खोजों का प्रभाव समकालीन कला पर भी पड़ा, कलाकार के सामने एक नया क्षितिज खुल गया; कला के माध्यम से भविष्य की सम्भावनाओं को विस्तार से खोजना एवं सृजन करना शुरू कर दिया। किन्तु सृजनात्मक मनोभावों के लिये परम्पराओं की ओर देखना पड़ा और समकालीन कलाकारों ने प्रागैतिहासिक कला एवं प्रतीकों से सीख ली। प्रयोगधर्मिता एवं प्रेरणा के लिये उसका अध्ययन किया। व्यक्तिगत दृष्टिकोण अपना कर उन प्रतीकों एवं संकेतों के माध्यम से नवीन कला शैली को जन्म दिया जो समकालीन हैं।

समकालीन भारतीय चित्रकारों में बंगाल चित्रकला में प्रतीक शैली के विख्यात चित्रकार अवनीन्द्र नाथ ठाकुर, श्री नन्द लाल बोस, श्री क्षितीन्द्र नाथ मजूमदार इत्यादि के चित्रों में भारतीय प्रतीकों का सहारा लिया। आधुनिक भारतीय कला के प्रणेयता यामिनी राम की चित्रकला शैली भी प्रतीकात्मक है।[2] उन्होंने लोक कला से प्रेरणा लेकर अपने चित्रों में नये प्रतीकों का प्रयोग किया। समकालीन कलाकारों ने प्रतीकों तथा रूपकारों को बहुत विस्तृत कर दिया। तकनीकी कौशल एवं नवीन विचारों के द्वारा आधुनिक कला को एक नई दिशा दी। भारतीय समकालीन कलाकारों ने भारतीय चित्रकला में प्रतीक शैली को समृद्ध किया।

एक कलाकृति को कलाकार के उस प्रयास के रूप में विचारा जाता है, जिसके माध्यम से वह अपनी अभिव्यक्ति को मूर्त रूप प्रदान करता रही है। वह अपनी भावनाओं को अपनी रचना में समुचित रूप से अभिव्यक्त

करने में सफल हुआ या नहीं। वह अपनी भावनाओं को दर्शक तक संचारित करने में सक्षमरहा।[3] कलाकार समाज में जो कुछ देखता है उसे अनुभव करने और मंथन करने के पश्चात् अमूर्त रूप में भावाभिव्यक्ति को आधार बनाया। अतः कला समाज का ही प्रतिबिम्ब है। समसामयिक विचारों को आज के कलाकारों ने अधिक महत्व दिया तथा प्रतीकों के माध्यम से उसे व्यक्त करने का प्रयास किया। समसामयिक कला सूक्ष्म से सूक्ष्मतर होती जा रही है।

सर हाबर्ट रीड के अनुसार – ''कला के विकास में मानव मस्तिष्क के विकास को प्रतिबिम्बित देखते हैं। उनके अनुसार आज कला समाज से पृथक हो गयी है। औद्योगिक क्रान्ति ने उसे समाज से निष्कासित कर दिया..... ..... आधुनिक कला सूक्ष्म से सूक्ष्मतर हो गई है, उसमें रूप व रंग की भावाभिव्यक्ति या भावाभिव्यंजना की प्रधानता है। कलाकार प्रतीकों के माध्यम से अपनी अभिव्यक्ति करने लगा। जैसे दो प्रेमियों के मिलन को दो पूरक रंगों की रेखाओं से अभिव्यक्त किया जाता है, जो एक दूसरे से लिपटी हुई होती है। एकाकी सितारे को बनाकर आशा का संकेत दिया जाता है। आधुनिक काल में इस प्रकार कला की सूक्ष्म अभिव्यक्ति हो गई है।[4]

समकालीन कला को समझने के लिये प्रतीकों का ज्ञान होना अति आवश्यक है। समकालीन अमूर्त कला साधारण व्यक्ति की समझ से परे हैं। अतः यही कारण है कि समकालीन कला सामान्य समाज से दूर होती जा रही है। कलाकृति जितनी सरल होगीं दर्शक उसे उतनी आसानी से समझ सकेगा। समकालीन कला एक ऐसी भाषा है जिसका अर्थ शब्द कोष में नहीं मिलता उसके रसास्वादन के लिये दर्शक को परम्परागत और समसामयिक कला का ज्ञान होना चाहिए। परम्परागत कला का ज्ञान इसलिए क्योंकि समकालीन कला में प्रयुक्त प्रतीक परम्परागत कला से ही सम्बन्धित है। सर हर्बर्ड रीड ने भी कहा है – आधुनिक कला एक प्रतीक है, इस प्रतीक को प्रबुद्ध व्यक्ति ही समझने में सक्षम होता है। सामान्य व्यक्ति प्रतिमा को समझ सकता है प्रतीक को नहीं.....। कला ने 30000 वर्षों की परिक्रमा पूरी कर ली है। आधुनिक कला लौटकर उसी आदिम गुफा में चली आई है जहाँ से उसका उद्भव हुआ था। इस प्रकार कला ने अपना सम्पूर्ण चक्र पूरा कर लिया। आज की आधुनिक व प्रागैतिहासिक कला में बहुत कुछ साम्य है। आज कला विभिन्न उद्देश्यों का एक साधन है, किसी के लिये वह सौन्दर्य की जीती जागती मूर्ति है, किसी के लिये बौद्धिक अनुभूति है। तो किसी के लिये मात्र अभिव्यंजना।[5]

समकालीन कलाकृतियाँ प्रतीकात्मक है किन्तु उनका उद्देश्य सामाजिक विकास करना है। कलाकृतियाँ संचार का माध्यम है। कला भावों की अभिव्यक्ति है। भारतीय चित्रकला पूर्णरूप से भारतीय मानसिकता को उजागर करता है। कलाकार सामाजिक वातावरण को आत्मसात् कर अपनी कलाकृतियों के माध्यम से दर्शक तक पहुँचाता है। समकालीन कला पर सबसे अधिक राजनैतिक प्रभाव पड़ा है, समाज की विषम परिस्थितियों, भ्रष्टाचार, शोषण आदि को कलाकार अनुभव कर कलाकृति के माध्यम से समाज को इससे परिचित कराता है। कलाकार समाज के विभिन्न पक्षों को अपने चित्रों के माध्यम से व्यक्त करता है। अगर कलाकारों की कलाकृतियों का सर्वेक्षण किया जाए तो आभास होता है कि उसकी भावाभिव्यक्ति में भारतीय मानसिकता की झलक है। क्रोचे ने कलाकृति को बौद्धिक माना है, और जो हमारी स्मृति को जगाने में सहायक हो जाती है। कला भावों की भाषा के समान तत्वतः आन्तरिक स्थिति की अभिव्यक्ति का एक माध्यम है।[6]

समाज कला सृजन की प्रेरणा का अक्षय कोष है। कलाकार इसी कोष से अपने विषय का चुनाव करता है तथा चित्र रचना करता है। मार्क्स के अनुसार – ''हमारे मानसिक जीवन तथा विचारों में सामाजिक जीवन का प्रतिबिम्ब ही झलकता है। समाज ही हमारे भावों का परिष्कार करके उन्हें समृद्ध करता है। हमारी अनुभूतियों का स्त्रोत व्यक्तिगत तथा सामाजिक दोनों प्रकार का जीवन है।

कला मनुष्य के चारों ओर की दुनिया को प्रतिबिम्बित करती है वह सांसारिकता के बोध में सहायता करती है। कला सामाजिक चिंतन को ग्रहण करके मानवीय संवेदनाओं से जुड़कर समाज को स्वयं का विकास एवं सुन्दर जीवन जीने के लिये प्रेरित करती है। अतः हम कह सकते हैं कि कला समाज से प्रेरणा ले कर उसे अपनी कल्पना के द्वारा सुन्दर रूप देकर कलाकृति के माध्यम से समाज को वापस कर देती है।

समकालीन कला का अर्थ :

कला में समकालीनता के अर्थ को समझने के लिये पहले ''समकालीनता'' पर विचार करना होगा। इस शब्द का अर्थ है 'एक ही समय में समय के साथ' या 'समय के साथ चलते हुये। पहले जिस कला संदर्भ के लिये ''आधुनिक कला'' शब्द का प्रयोग किया जाता था। उसी कला संदर्भ के लिये अब ''समकालीन कला'' शब्द का प्रयोग होता है। इन दोनों का शाब्दिक रूप से अर्थ अलग है परन्तु पारिभाषिक रूप से अर्थ लगभग समान है।[7]

आधुनिक कला आन्दोलन के बाद की सृजनात्मक कला का परिभाषित करने के लिये ''आधुनिक कला शब्द का प्रयोग 5 दशकों तक किया गया। परन्तु इस शब्द से सन्तुष्ट न होकर हर काल की आधुनिकता को समय के साथ देखने का प्रयास जारी हुआ और अब समकालीन कला शब्द का प्रयोग कला के उन्हीं संदर्भों के लिये हो रहा है, किन्तु यह शब्द भी कहीं–2 सार्थक नहीं हो रहा हैं इसलिये अपनी बातों को कहने के लिये कुछ विद्वान ''आज की कला'' शब्द का व्यवहार करने लगे हैं।[8]

समकालीन कला का तात्पर्य उस कला से है जो वर्तमान में एक विशेष आन्दोलन से जुड़ा है और प्राचीन परम्पराओं और रूढ़ियों को नजरअंदाज कर निरन्तर विकासशील हो रेखाओं, रंगों, माध्यमों, विषयों और शैलियों में

निरन्तर नये–नये प्रयोग हो रहे हैं। कला अभिव्यक्ति, मनोवैज्ञानिक, प्रतीकात्मक तथा जटिल होती जा रही है। समकालीन कलाकारों के लिये कोई भी विषय भारतीय समाज की जटिलतायें, कुण्ठायें आदि अछूती नहीं है। अगर संघर्षरत नये कलाकार की कृतियों पर नजर डालें तो ये विंगतियाँ पूरी जटिलता के साथ उनके चित्रों में दिखलाई पड़ती है। समकालीन कलाकार व्यक्ति तथा समाज की भावनाओं को आत्मसात् कर गहन खोज में लगा हुआ है।[9]

विगत् कुछ वर्षों से समकालीन कला के अर्थों को समझने का प्रयास जारी है। कला के विविध माध्यमों संसाधनों के वैज्ञानिक विकास ने अभिव्यक्ति की सम्भावनाओं को अधिक स्वयं स्फूर्त बनाया।[10] प्रत्येक व्यक्ति के लिये समकालीनता का अलग–अलग अर्थ है। कोई अमूर्त कला को समकालीन कला मानता है कोई नवीन प्रयोग को कोई अरूपवाद को। सभी के लिये समकालीन कला के अर्थ भिन्न–भिन्न है किन्तु समकालीन कला का जो सही अर्थ है वह है समय के साथ। कला सदैव ही समकालीन रही है, तथा समय व्यतीत होने के बाद वह प्राचीन हो जाती है।

समकालीनता कोई वाद नहीं है। परन्तु इसमें कलाकार की स्वतन्त्रता अवश्य परिलक्षित होती है। समकालीन कला में अनेक कला आन्दोलन और शैलियाँ का प्रतिनिधित्व करती है। समकालीन कला में विषय और माध्यम की सीमायें टूट चुकी हैं। कलाकार अधिक व्यक्तिगत और स्वतन्त्र हो चुका है।[11]

समकालीन कलाकार विज्ञान, तकनीक, कम्प्यूटर, संचार माध्यमों आदि की उपज है। अतः उसकी प्रतिभा और सृजनशीलता उसे नये–नये प्रयोग के लिये प्रेरित करती है। परन्तु इस कला के रसास्वादन के लिये समसामयिक कला का ज्ञान होना अति आवश्यक है।

समकालीन कला की विचार धारा के अर्न्तगत कलाकार की विशुद्धतावादी दृष्टिकोण प्रेरणाभूत है। कलाकार की आत्मिक अनुभूति के अतिरिक्त विशुद्धता का कोई मापदण्ड नहीं होता। समकालीन कला पर विचार करें तो तीन प्रमुख कलाधारायें हैं।

- कलाकार वस्तु के वाह्य रूप के सादृश्य से प्रतीकात्मक दर्शन को अधिक पसन्द करता है।
- अपनी कलाकृति को सामाजिक महत्व की निर्मित मानने के बजाय आन्तरिक आवश्यकता की पूर्ति मानता है।
- कलाकृति का मूल्यांकन या रसग्रहण करते समय उसके सौन्दर्यात्मक गुणों का विचार करता है।

अगर समकालीन कला के प्रवाहों पर विचार करें तो तीन प्रभावों में विभाजित कर सकते हैं।

- कला–प्रवाह में कलाकृति के वस्तु निरपेक्ष रूप
- कलाकार की आत्मिक अभिव्यक्ति
- कलाकार की कल्पना विलासता

कलाकार वस्तु के आन्तरिक गुण का ही प्रत्यक्षीकरण करता है, बाह्य रूप का नहीं इस दृष्टि से कलाकार की तुलना रहस्यानुभवी से की जा सकती है। लेकिन रहस्यानुभवी जीवन में सम्पूर्णता की खोज करता है, जबकि कलाकार सृजक बन जाता है। सृजन आत्मा और विषयवस्तु के काल्पनिक संयोग का परिणाम है।[12]

विषय वस्तु के सार तत्व की अभिव्यक्ति तभी सम्भव है जब कलाकार उसके साथ पूरी तरह तदात्म्य स्थापित कर लेता है। आन्तरिक सत्य को पूरी तरह से आत्मसात् कर लेता है।[13]

समकालीन कलाकारों ने इसी आन्तरिक रहस्य और चेतना शक्ति को पहचानने और उसे अपने निजी प्रयोगों में अभिव्यक्त करने की कोशिश की है, समकालीन कलाकारों ने आन्तरिक चक्षुओं द्वारा वस्तु के स्वभाव को आत्मसात् करते हुये स्वतः को स्वतन्त्र कर लिया। अब वह प्रकृति की नकल नहीं करता और न ही उसे वस्तु के साम्य से कोई लगाव रहता है। प्रकृति कलाकार के अनुभव की वस्तु बन जाती है, वस्तु के मूल तत्वों द्वारा आकार का सृजन ही समकालीन कला की मूल रचना पद्धति है। जिसके द्वारा वह वस्तु का चित्रात्मक प्रत्यक्षीकरण करता है। वह न केवल विषय वस्तु के चाक्षुष स्वभाव को निश्चित करता है बल्कि रंग, रूप, धरातल और उभार आदि सभी चाक्षुष गुणों को निर्दिष्ट करते हुये नई दिशा, नये भाव और नये विचार प्रदान करता है। इसी सन्दर्भ में प्रसिद्ध चित्रकार ''पाल क्ले'' ने विचार और भाव को प्रधानता देते हुये कहा है कि – ''प्रत्यक्ष अभिप्राय से उत्पन्न रूपाकारों की समस्त चेतना शक्ति, ब्रश द्वारा ही अभिव्यक्त होती है। ब्रश के प्रत्येक आघात में कलाकार का स्पर्श होता है, और हर आघात का अपना निजी स्वभाव होता हैं आघातों का पारस्परिक प्रभाव तथा उनके बीच का अन्तराल जिन तत्वों की सृष्टि करता है उनके घनत्व, शून्यत्व, स्थैर्य और गति में सन्तुलन बनाये रखना अति आवश्यक है।[14]

समकालीन कलाकार खुद को पहचानने में इतने अधीर हैं कि वह किसी भी वातावरण से समझौता नहीं करना चाहता। यही कारण है कि समकालीन कला के क्षेत्र में असाधारण रूप से विभिन्न वादों और आयामों का प्रादुर्भाव हो चुका है। समकालीन कला में विविधता, आश्चर्यजनक रूप से समृद्ध है। बदलता हुआ प्रबुद्ध समाज बड़े मनोयोग से इस व्यक्तिगत भाषा को समझने परखने की चेष्टा कर रहा है।

समकालीन रचनाधर्मिता के क्षेत्र में 'प्रयोग' शब्द आधुनिकता का पर्याय बन चुकी है। यह शब्द वैज्ञानिक युग की देन है। मशीनीकरण और तकनीकी प्रगति के साथ यह शब्द खासतौर से जुड़ा हुआ है। कलाकारों ने एक ओर अप्रत्यक्ष रूप से विज्ञान के विभिन्न पक्षों और प्रयोगधार्मिता के प्रति खिंचाव महसूस किया तो दूसरी ओर

यान्त्रिक जड़ता के बन्धन से मुक्त होने की चेष्टा कर रहा है। परम्परा की जंजीरों ने जिस प्रकार तत्कालीन कला को जकड़ रखा था उससे मुक्ति पाने की प्रतिक्रिया के लिये अमूर्तन तथा समकालीन विधाओं का जन्म हुआ।[15]

कला सदैव अमूर्त होती है। क्योंकि वह कलाकार के भावों की अभिव्यंजना होती है। मानव के प्रथम बार खड़िया गेरू, कोयला हाथ में लेकर अपनी गुहा भित्तियों पर अपने मानस में घुमड़ते हुये प्रभावों को रूपादित करने के लिए जब रेखा खीचीं होगी, कला उसी क्षण से अमूर्त है। क्योंकि प्रकृति में रेखा नहीं होती। उसका निर्माण मानव ने किया है। कला कल्पित रूप से अभिव्यंजना है और रेखाओं के द्वारा ही इसका रूपांकन होता है। खींचित रेखा एवं संकेत का अंकन है और वह संकेत कलाकार की भावनाओं से रूपान्तरित हो, कला रूपों से सम्प्रेषित होता है।[16]

अरूपवाद एवं विषयवस्तु

चित्रकला के क्षेत्र में अरूपवाद का आरम्भ 1910 ई0 में यूरोप के एक चित्रकार कैडिस्की के एक चित्र से माना जाता है। कहा जाता है कि – चित्रकार कैडिस्की एक दृश्य चित्र बना रहे थे। शाम को जल्दी में अपने स्टूडियो से निकलते समय वह इस दृश्य को उल्टा दीवार के सहारे खड़ा करके चले गये, कुछ दिनों बाद जब उन्होंने पुनः स्टूडियो खोला तो सामने उन्हें एक सुन्दर सा अजीब चित्र दिखाई दिया, जिसमें रंग सामंजस्य बड़ा ही सुन्दर एवं आकर्षक था, किन्तु विषय स्पष्ट नहीं हो रहा था। यह वही उल्टा रखा हुआ दृश्य चित्र था। तब कैन्डिसकी को आभास हुआ कि रंगों का सामंजस्य ही सुन्दर और आकर्षक होता है उसमें विषय वस्तु की आवश्यकता नहीं होती। उसके पश्चात् वह अरूपवादी चित्रकार बन गये।[17]

अरूपवाद का तात्पर्य ऐसा चित्र बनाना है जिसमें किसी भी जानी पहचानी वस्तु का चित्रण न हो, मात्र रंगों का सामंजस्य अर्थहीन आकार तथा रेखाओं का सूक्ष्म संयोजन हो। इन कला कृतियों में कोई विषय–वस्तु नहीं होती। इसका प्रभाव मात्र चाक्षुष होता है। इस संयोजनों को देख कर वैसा ही प्रभाव ग्रहण किया जाता है जैसा पटाखों और फुलझड़ियों को देखकर। अरूपवादी कला को देखने की वस्तु माना जाता है, समझने की नहीं। इसका प्रभाव ग्रहण मात्र इन्द्रियजन्य होता है। अरूपवादी चित्रकारों का मानना है कि जब किसी वस्तु का चित्रण होता है तो उस वस्तु का चरित्र दर्शक को अपनी ओर इस तरह खींचता है कि वह चित्र कलात्मक गुणों के रसास्वादन में बाधा पहुँचाता है।[18]

अरूपवादी चित्रकारों ने वास्तुकला तथा संगीत से प्रेरणा लेकर ये दिखाने की कोशिश की है कि जैसे भवन का स्वरूप प्रकृति से अलग होते हुये भी सुन्दर अथवा प्रभावशाली दिखता है। उसी प्रकार मात्र रंग रेखाओं से निर्मित सूक्ष्म चित्र संयोजन भी कलात्मक तथा प्रभावशाली हो सकता है। अरूपवाद संगीत तथा भवन निर्माण कला के अनुरूप चलने का एक प्रयास था और इसी प्रयास में सफल होने के लिये उन्होंने मानव आकृतियों प्रकृति के स्वरूपों तथा वस्तुओं को अपने चित्रों से बहिष्कृत कर दिया, अरूपवादी चित्रकारों को ये चीजें चित्रकला के लिये अनावश्यक प्रतीत होती है और वे प्रकृति की नकल न करके स्वयं नये आकारों का सृजन करते हैं।[19]अरूपवादी कला समकालीन कलाकारों की स्वतन्त्रता की प्रतीक है। जिसके द्वारा उन्होंने धर्म संस्कृति, परम्परा, राज्य, जाति, क्षेत्रीयता तथा प्रचलित शैलीगत् रूढ़ियों से मुक्त होने का प्रयास किया।

आधुनिक चित्रकारों एक ही तरह की सृजनशीलता से ऊबकर उससे पृथक कुछ करने का प्रयास किया वो अरूप चित्र के माध्यम से सौन्दर्य को व्यक्त करता है। उसके चित्रों का मुख्य उद्देश्य आनन्द प्रदान करना है। परन्तु आज दर्शक चित्रों को देख प्रतिक्रिया रहित रूख अपनाता है या तो वह मौन रहता है या चित्रों के प्रति नकारात्मक दृष्टि अपनाता है। समय की कमी और औद्योगिकीकरण के द्वारा सामान्य मनुष्यों में कला के प्रति उदासीनता आ गई है। व्यस्तता, चिन्ता, तनाव, उलझनों से भरी जिन्दगी ही आज की सत्यता है। मनुष्य इसमें उलझकर रह गया है।

अरूपवाद के जन्म का कारण स्वयं कलाकार नहीं है। उसकी जटिल सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा दार्शनिक परिस्थितियाँ थी जिससे मुक्ति पाने के लिये उसे व्यक्तिवादी, अरूपवादी रूख अपनाना पड़ा। अरूपवादी चित्रकला के सृजन के लिये कलाकार के अन्दर वस्तु के आन्तरिक स्वरूप को पहचानने तथा बिम्बों के माध्यम से व्यक्त करने की क्षमता होनी चाहिए।

फिलास्ट्रेटस के अनुसार – ''चित्रकला में सफल उपलब्धि प्राप्त करने के लिए मानव स्वभाव का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है। चित्रकार को बाह्य रूप में आन्तरिक स्वरूप की अभिव्यक्ति करने की प्रतिभा होनी चाहिए।[20]

फिलास्ट्रेट्स की ये उक्ति आधुनिक कला में सार्थक हुई है। आधुनिक कला को समझने के लिये मानव स्वभाव तथा प्रतीक का ज्ञान होना अति आवश्यक हो गया है। समकालीन कलाकार प्रकृति से ग्रहण किये बिम्बों को अपनी कल्पना बुद्धि और स्मृति से कैनवास पर अपने भावना व विचारों को नियम परम्परा व शैली के बन्धनों से मुक्त होकर प्रकट करता है। ऐसी मान्यता है कि कलाकार बोलता नहीं है उसके चित्र बोलते हैं किन्तु ये विचार अरूपवादी कला के अनुकूल नहीं है। वर्तमान की अरूपवादी कला और दर्शक के बीच में पर्याप्त अन्तर स्थापित हो गया है। जिसकी पूर्ति कलाकार कभी–कभी प्रतीकों के द्वारा या चित्र पर विषय अंकित करके करता है।

पिछले सौ सालों से कलाकार सामान्य लोगों के जीवन से दूर होता जा रहा है। सामान्य व्यक्ति प्रायः न समझ में आने वाली कला को आधुनिक कह देते हैं। जिसमें कलाकारों द्वारा संयोजित नया रूप होता है अथवा

अमूर्त होता है। यहाँ तक कि कलाकार रंगों के धब्बे, ज्यामितिक आकृतियों और लकीरों से तनाव पूर्ण संयोजन चित्रतल पर उतारता है। कभी–कभी वो रूप स्वतः निर्मित या आकस्मिक प्रयोग के रूप में ही होते हैं, जो जन सामान्य की समझ से बाहर होता है; क्योंकि ऐसे रूप कलाकार के दिमाग की उपज होती है। वस्तुतः अप्रत्यक्ष रूप से समाज के मूल दबावों व जीवन की कुंठाओं के कारण ही ऐसे चित्र प्रकट होते हैं।(21)

अरूपवादियों ने चित्रकला में लय को चाक्षुष सौन्दर्य का महत्व देने के लिये स्वरूप को हटा दिया है जिस कारण कला समाज से दूर होती जा रही है। अरूपवादी कला पश्चिमी कलाकारों की स्वतन्त्रता का प्रतीक अवश्य थी जिसके द्वारा उन्होंने धर्म, संस्कृति, परम्परा, राज्य, प्रचलित शैलीगत् रूढ़ियों से मुक्त होने का प्रयास किया किन्तु यह कला के लिए आवश्यक नहीं है। वास्तव में अरूपवादी चित्रकला इतनी आवश्यक नहीं किन्तु यूरोपीय सभ्यता, संस्कृति एवं कला से प्रभावित होने के कारण अरूपवादी चित्र बनाने का प्रचलन सा हो गया है। कुछ लोग अरूपवादी चित्र बनाने या देखने को आधुनिकता समझते हैं। किन्तु अरूपवाद आधुनिकता का पर्याय नहीं, आधुनिकता की एक कड़ी मात्र है।(22)

कला का धर्म अदृश्य को सदृश्य बनाना है। आज कला की परिभाषा बिल्कुल उल्टी प्रतीत होती है। आज की आधुनिक कला का धर्म साक्रेटीज की परिभाषा के बिल्कुल विपरीत है। आज कला का धर्म, दृश्य को अदृश्य बनाना हो गया है। प्राचीन और नवीन दृष्टिकोणों में यह आकाश–पाताल का अन्तर। यह युग परिवर्तन के फलस्वरूप ही होता है।(23)

अतः यह कहना सतर्क संगत होगा कि अरूपवादी कला अपने धर्म से भटक गई है। आज कला का उद्देश्य कुछ भी हो किन्तु यह सत्य है कि अरूपवादी कला सत्य की अभिव्यक्ति नहीं है। अरूपवादी कला, कला के उद्देश्य की पूर्ति नहीं करती।

बोसांके के अनुसार ''कला शारीरिक और मानसिक दोनों पर संगठित प्रभाव डालती है जिसे 'फीलिंग' कहते हैं और जो वस्तु में साकार हो उठती है।''(24)

अतः जिस कला में कोई विषय वस्तु न हो जो अरूपवादी हो जिसका कोई रूप न हो वह मनुष्य के मस्तिष्क पर कैसे प्रभाव डालेगी। यहाँ अगर अमूर्तवादी कला के पक्ष में कहना हो तो इतना कह सकते हैं कि वह सौन्दर्य के अभिव्यक्ति की प्रतीक तथा शून्य को सशक्त कर सकती है।

समकालीन कला समाज का एक अभिन्न अंग है और कलाकार सामाजिक प्राणी। चित्रकला वस्तुतः प्रत्येक कलाकार की मनःस्थिति अथवा आत्मानुभूति का एक आन्तरिक अंश है। आधुनिक कला आधुनिक मानव की कला है। आधुनिक जीवन जितना जटिल है कला उतनी ही क्लिष्ट।

वर्तमान समय में कला का क्षेत्र विस्तृत एवं गहन हो गया है। मानव जीवन का कोई ऐसा पक्ष नहीं है जो कला का विषय न हो।

प्रसिद्ध विद्वान भामह ने कहा है कि ''प्रकृति, चिंतन और कल्पना के संसार में कोई ऐसी चीज नहीं है जो कला की विषयवस्तु नहीं हो सकती।''(25)

जब तक कलाकार प्रकृति और जीवन से सम्बन्ध स्थापित रखेगा तब तक कलाकार की विषय वस्तु का प्रयोजन पूरा होता रहेगा। विषय वस्तु के चयन के लिये कलाकार की कल्पना शक्ति, स्मृति, और विचारों को उतना ही गहन और असीमित माना गया है जितना कि प्रकृति और मानव जीवन के अनुभवों को। कलाकार अपने जीवन तथा समाज से प्रेरणा लेकर सृजन कार्य करता है, अपने जीवन के उतार–चढ़ाव, सुख–दुःख, आदि अनुभवों को विषय वस्तु बनाकर अपने चित्रों में व्यक्त करता है। विषय वस्तु का अवयव प्रकृति, मानवीय विचार, कल्पना कहीं से भी ग्रहण किया जा सकता है बस कलाकार में उसकी समझ तथा उसे सौन्दर्य के साथ व्यक्त करने का कौशल एवं धैर्य होना चाहिए।

पृथ्वी पर कोई ऐसी वस्तु, भाव, कल्पना, परिस्थिति नहीं है जो कलाकार के विषय–वस्तु के चयन क्षेत्र में सीमित न हो। विषय–वस्तु के चयन के लिये कलाकार के उस क्षितिज को भी उतना ही गहन माना गया है जितना रस, अलंकार के संसार को उसे उतना ही असीमित माना गया है जितना, अम्बर, प्रकृति, भाव, मन की चंचलता एवं मानव जीवन के अनुभवों को। कलाकार विषय पर जितना ध्यान केन्द्रित करता है वह खुद को उतना ही विषय के करीब पाता है और विषय भी कलाकार के प्रति समर्पित हो जाता है। इस प्रकार ऐसी स्थिति आती है जब कलाकार और विषय एक होकर एक सुन्दर चित्र की रचना करता है।

''मानसी प्रतिरूपा चक्षुषि''

अर्थात् जो कुछ भी प्रत्यक्ष और वास्तविक है वह मानसिक प्रतिबिम्ब है।

(कौशितकि उपषिद्)(26)

कलाकार जो कुछ भी प्रत्यक्ष देखता है उसे आत्मसात् कर उसमें भाव एवं कल्पना का मिश्रण कर चित्र रचना करता है। कल्पना मानसिक प्रतिबिम्ब है और यह बिम्ब वो प्रत्यक्ष वस्तुओं से ग्रहण करता है। बुद्ध की मान्यता है कि –

''चित्तम चित्तेनेव चिंतितम''

अर्थात् चित्त से ही किसी चित्र की कल्पना होती है।[27]

कलाकृतियाँ मानवीय अनुभूतियों, भावों से सम्बन्धित होती हैं। उनके माध्यम से भावों को कल्पना के सहयोग प्रस्तुत करने का अवसर प्राप्त होता है। अभिलाषितार्थ चिंतामणि में भी लिखा है –

''चिंतयेत् प्रमाणम् तद् ध्यातम भित्तम निवेशयेत''

अर्थात् पहले चित्र की कल्पना करो उसके पश्चात् चित्र को दीवार पर खींचने से पहले प्रत्यक्षीकृत कर प्रत्यक्ष देखो। एक अत्यन्त परवर्ती ग्रंथ ''शुक्रनीतिसार'' में स्पष्ट कहा गया है–

''ध्यात्वा कुर्यात्''

अर्थात् दृश्य की अनुभूति के बाद कार्य शुरू करो।[28]

कलाकार किसी विषय वस्तु के साथ एकीकार होकर उससे अपने को जोड़कर एक सार्थक कृति की रचना करता है। कलाकार जैसा अनुभव करता है। वैसा व्यक्त करने का प्रयास करता है। अतः कलाकार के चित्रों की विषय वस्तु प्रकृति एवं समाज को प्रतिबिम्बित करती है। कलाकार बाह्य जगत से प्रेरणा ग्रहण कर अपने चित्रों के माध्यम से व्यक्त करता है। वैज्ञानिक युग आने से एवं धार्मिक और राजसिक संरक्षा समाप्त हो जाने से कलाकार की सोच अत्यधिक व्यक्तिगत् एवं स्वतन्त्र हो गई है। कलाकार की सोच का दायरा बढ़ने से विषय वस्तु में व्यापकता आ गई है। समकालीन कलाकार अपनी कल्पना के आधार पर अपने विषय का चुनाव करता है तथा मूर्त या अमूर्त रूपों में अपने अर्न्तमन के भावों की अभिव्यक्ति करता है। प्रतीकात्मक रंग योजना और लयात्मक रेखाओं तथा टेक्सचर के द्वारा चित्र विन्यास करता है। समकालीन चित्रकार दरबार की सीमाओं से बाहर निकलकर जन साधारण के बीच आ गया है तथा दैनिक क्रिया–कलापों, संघर्षों, समाज की गतिविधियों को अपने संवेदनशील दृष्टि से देखकर, अनुभूति कर अपने चित्रों का विषय बनाता है।

सामाजिक प्राणी के दैनिक जीवनचर्या, संघर्ष, उल्लास, सोच, दुख कलाकार और विषय वस्तु के बीच का माध्यम होता है। इन्हीं के अनुभव कर कलाकार चित्रों का सृजन करता है। कलाकार कितना भी स्वतन्त्र और आधुनिक क्यों न हो जाये वह प्रकृति से ही प्रेरणा लेता है और उसे अपनी कल्पना शक्ति के आधार पर परिवर्तित कर मूर्त रूप देता है। कलाकार की कल्पना परिस्थितियों के साथ परिवर्तित होती है तथा कला की विषय वस्तु और माध्यम भी। इस सब पर समय और आधुनिकता का पूर्ण प्रभाव पड़ता है। कला भी मानव और प्रकृति के समान परिवर्तनशील और विकासपूर्ण है।

समाज के साथ ही कलाकार की सोच और विषय में भी परिवर्तन आ गया है। विकासशील नगरीकरण का सर्वप्रथम चित्र रामकुमार ने चित्रित किया इनकी कहानियां और चित्र आधुनिक अस्तित्ववाद में सृजित है। इनके प्रारम्भिक चित्रों में शाही शहरी लोगों को प्रमुखता मिली। आकृतियाँ वेशभूषा निम्न मध्यमवर्गीय लगती हैं। रामकुमार ने नगर में रहने वाले लोगों को अत्यन्त संवेदनशील और सूक्ष्मदृष्टि से देखा और चित्रित किया।[29]

कलाकार कितना भी व्यक्तिवादी क्यों न हो अपने वातावरण से नहीं बच सकता, क्योंकि कलात्मक अन्तः प्रेरणा मानव में अन्तर्निहित होती है, किन्तु कलाकृति एक स्वतन्त्र और तटस्थ विचार नहीं होती।[30] सामाजिक संदर्भ विषय वस्तु के परिवर्तन में दिखाई देता है। समकालीन कला में जीवन व परिवंश के प्रति कलाकार की सूक्ष्म दृष्टि व संवेदनशीलता परिलक्षित होती हैं।

किसी भी वस्तु या घटना का कलाकार बड़ी सूक्ष्मता से अध्ययन करता है, उसको गहराई से समझता है तत्पश्चात् अपनी कल्पना शक्ति और सृजनात्मक क्षमता से भावों को साकार करने हेतु कलाकृतियों का सृजन करता है। कलाकार कलाकृतियों का निर्माण 'स्वान्तः सुखाय' के लिये करता है किन्तु उस कृति का उद्देश्य समाज को सोचने व समझने के लिये नई दिशा प्रदान करना होता है। कलाकार समाज का दिग्दर्शन करता है अतः 'कला समाज का दर्पण है।' कलाकार अपने कृतियों के माध्यम से समाज की कुरीतियों व समस्याओं को व्यक्त कर कला और समाज के बीच सेतु का निर्माण करता है। कलाकार एक विशिष्ट गुण वाला सामाजिक व्यक्ति होता है उसमें सामान्य मनुष्यों के अपेक्षा एक अद्भुत शक्ति होती है जो सदैव समाज को दिशा निर्देश देती है। कलाकार द्वारा भोगा हुआ यथार्थ उसकी कलाकृति में तूलिका, रंग और विचारों के माध्यम से कैनवास पर दिखाई देता है। कलाकार आम आदमी के जितना नजदीक होता है उसकी कृति उतनी ही सजीव व सटीक होती है। आधुनिक जीवन की यथार्थताओं और समस्याओं से जो अनुभव किया उसी को अपने चित्रों के माध्यम से व्यक्त करता है जनता का कष्टमय जीवन, बुद्धिजीवी वर्ग का असन्तोष, शिक्षित बेरोजगारों की दुर्दशा आदि सामाजिक विषमताओं को कलाकारों ने अपना विषय बनाया।

आज की राजनैतिक और औद्योगिक परिवेश में जिन विरोधी प्रवृत्तियों का बोलबाला है। चित्रकार इससे अनभिज्ञ नहीं है वह इसे अनुभव कर चित्रों के माध्यम से व्यक्त करता है। चित्रकार राम चन्द्र शुक्ल, गोपाल मधुकर चतुर्वेदी कृष्ण खन्ना आदि ने भ्रष्टाचार राजनैतिक एवं सामाजिक एवं सामाजिक कुरीतियों को अपने चित्रों का विषय बनाया और उन पर सीधा कटाक्ष किया। आधुनिक जीवन की यथार्थताओं, समस्याओं और आर्थिक विषमताओं को लेकर जो भाव उत्पन्न हुये, उसी के अनुकूल इन चित्रकारों ने अंकन किया।

समकालीन कला :प्रयोगधर्मिता एवंसमस्यायें व चुनौतियां

वर्तमान में कला संस्कृति बहुत तेजी से बदल रही है। कला के विभिन्न, रूपों, माध्यम एवं तकनीक का विकास हो रहा है। समय के समान कला भी परिवर्तन शील एवं प्रगतिशील है। जो कल का समकालीन था आज का अतीत बन गया है, किन्तु उसकी परम्परा जीवित है। प्रगति, विकास और नवीनता की आकांक्षा से कलाकार पुरानी परम्पराओं में कुछ नया खोजकर उसे बदलने के लिये निरन्तर प्रयासरत् है। "सन् 1980 से कला में मिश्रण (Mixed) रूप (Form) का प्रवेश हुआ और शिल्प का क्षेत्र (Dimehsion) विस्तृत होकर एक व्यापक स्वरूप ग्रहण कर गया"।(31)

मनुष्य के साथ–साथ कला का भी विकास हुआ। कलाकारों ने अपनी अन्तः अभिव्यक्ति को व्यक्त करने के लिये अनेक माध्यमों का प्रयोग किया। प्रयोग की यह प्रक्रिया प्राचीनकाल से लेकर वर्तमान काल तक अनवरत रूप से जारी है। कला का विकास प्रयोगधर्मिता पर आधारित है। यद्यपि जल रंग और तैल रंग सबसे प्रिय माध्यम है फिर भी समकालीन कलाकार इनसे परे जा कर अनेकों प्रयोग की अपेक्षा नवीन साधनों का प्रयोग किया। तूलिका के साथ मशीन का प्रयोग होने लगा। रंगों के माध्यम में भी कई तरह के प्रयोग हुये। चित्र डिजिटल युग में आ गये। चित्रों की रचना मशीनों तथा कम्प्यूटर से होने लगा। चित्रकला कागज से चल कर कम्प्यूटर स्क्रीन तक पहुँच गई। जहाँ चित्र रचना में कई दिन लग जाते थे अब कुछ क्षण में ही सृजित हो जाने लगे।

कला आदिम काल से आधुनिक काल में आ गई। आदि मानव के पास खड़िया, गेरू तथा खनिज रंग थे वे उन्ही के माध्यम से शिला, भित्ति या गुफाओं की छत पर रेखाओं के माध्यम से चित्र अंकित करते थे, किन्तु आधुनिक युग में चित्र कागज से होते हुये स्क्रीन तक पहुँच गये। दीवारों के पश्चात् चित्र कपड़े, ताड़पत्र, तथा कागज पर आ गये। कागज पर चित्रों में कई प्रयोग हुये और हो रहें है। भारत में मिनिएचर चित्रों की रचना कागज पर ही की गई है। जो विश्व प्रसिद्ध है। माध्यम, रंग और चित्रकला के साथ ही शैलियों में भी कई प्रयोग हुये।

चित्रों की मौलिकता बदल गई द्विआयामी के साथ रिलीक तथा त्रिआयामी प्रयोग होने लगे। फलक के साथ ही माध्यमों में भी परिवर्तन हुये रंगो के साथ वस्तुओं का भी उपयोग होने लगा। बनी बनाई वस्तुयें कलात्मक मानकर स्थापित की जाने लगी। नवीनता की तलाश में माध्यमों का महत्व कम हो गया। अब वह अपनी कल्पनाओं को प्रेक्षक के सम्मुख प्रस्तुत करने के लिये स्वतन्त्र रूप से चित्र रचना करने लगा। माध्यम का अन्वेषण न किया जाता तो शायद कला का विकास भी नहीं होता। माध्यम वस्तुतः कलाकारों को प्रयोग धर्मिता की ओर उद्यत करते हैं। माध्यम कहीं न कहीं कलाकार के भीतर सोये हुये बिम्बों को उत्तेजित कर सकता है।(32)दर्शक बहुत समय तक चित्रों में प्रयुक्त बिम्बों का स्मरण करता है। कलाकार की सृजनात्मक निष्ठा तथा कार्यकुशलता का गुणगान करता है। जिससे कलाकार को चित्रों में नवीनता लाने के लिये उत्साह मिलता है।

आधुनिक कला के विषय में पाश्चात्य देशों में सर्वाधिक प्रयोग हुये। पश्चिमी देशों में तकनीकी जागरूकता तथा संसाधनों का विकास तेजी से हुआ। पाश्चात्य देशों में विभिन्न तकनीकी तथा शैलियों के माध्यम से चित्र रचनायें की गई। जिनमें रंगीन काँच में चित्रकारी, धातु चित्र, भित्तचित्र, ईजल चित्र जल रंग एवं कोलाज आदि है। नवीनता की तलाश में कई वादों ने भी जन्म लिया, प्रभाववाद, अभिव्यंजना वाद, यथार्थवाद, प्रतीक वाद, अतियथार्थ वाद, छायावाद आदि हैं। इग्लैंड में 'पॉप आर्ट' का अभ्युदय हुआ। पॉप आर्ट में प्रचलित तथा ख्यातिलब्ध व्यक्तियों या वस्तुओं की बारम्बार आवृत्ति कर कलाकृतियाँ निर्मित की जाने लगी।

भारतीय कलाकारों ने पश्चिमी कलाकारों की कृतियों से प्रेरणा ग्रहण कर चित्रों में नवीन प्रयोग किया। वर्तमान में कला के अर्थ बदल चुके हैं। विभिन्न तकनीकों एवं कम्प्यूटर कला के अभिनव प्रयोग ने कला जगत को समृद्ध बनाया है। भारतीय कलाकारों के प्रयोग पाश्चात्य कलाकारों की तरह विचित्र तो नहीं किन्तु उनमें नवीनता तथा दृष्टा को आकर्षित करने की शक्ति है। "भारत में प्रयोग धर्मिता के केन्द्र चित्रतल रहें हैं"। अधिकतर प्रयोग माध्यमों तथा टेक्सचर पर किये गये। तैल रंगों में तेल की मात्रा बढ़ाकर रंगों को कैनवास पर बहा कर जल रंग जैया प्रभाव उत्पन्न किया गया, या रंगों को मोटे थक्कों में प्रयोग किया गया। समकालीन कलाकार नवीन से नवीन प्रयोग कर कलाकृतियों की रचना करते है। इस लिये भविष्य में चित्रों का क्या स्वरूप होगा कुछ कहा नहीं जा सकता है। भारतीय कला जगत में नवीन प्रयोगों की अपार सम्भावनायें हैं। जल रंगों और तैल रंगों के अलावा मिक्स–मीडिया माध्यम को कलाकारों ने खूब अपनाया दो या दो से अधिक माध्यमों को एक ही चित्र में प्रयोग करने को मिक्स–मीडिया कहते हैं। समकालीन कलाकारों ने इस माध्यम पर गम्भीर कार्य किया है। बुद्धजीवी कलाकारों ने माध्यम के द्वारा सृजन की अपार सम्भावनायें तलाशी। मिक्स मीडिया के द्वारा अनेकों तरह के टेक्सचर चित्रतल पर व्हाइट, फेवीकोल, बालू, मोरंग आदि वस्तुओं से चित्रतल पर टेक्सचर तैयार किया जाता है फिर उसमें रंग भरते हैं। इसमें अतिरिक्त कलाकारों के मस्तिष्क में जो भी माध्यम सटीक बैठता है उसका प्रयोग वे अपनी अभिव्यक्ति में करतें हैं।

कम्प्यूटर के अविष्कार से कला जगत में हलचल हो गई है। इसमें प्रयोग की अपार सम्भावनायें है। ये रचना का एक नया यंत्र है जिससे मनचाहा प्रभाव उत्पन्न किया जा सकता है। छोटी आकृति को बड़ी तथा बड़ी आकृति को छोटी सुविधानुसार किया जा सकता है। इसके माध्यम से एक ही कलाकृति के हजारों प्रिंट कुछ क्षण में ही निकल सकते हैं। इलेक्ट्रानिक प्लेट ने रंग विस्तार को भी एक नया आयाम दिया है। कम्प्यूटर के द्वारा चित्र में

मनचाहा टेक्सचर व प्रभाव उत्पन्न किया जा सकता है। कला जगत में कम्प्यूटर ने एक प्रकार की क्रान्ति ला दी है। किन्तु कम्प्यूटर कितना भी कला जगत पर हावी हो जाये परन्तु हस्त निर्मित आकृतियों का स्थान कभी नहीं ले सकता है।

''प्रयोग आधुनिक कला का पर्याय बन चुका है। इस पर गम्भीर एवं सघन विचार पूर्वक आगे आना चाहिए। यह कहीं एक फैशन का रूप मात्र ग्रहण करके न रह जाये। निःसंदेह आधुनिक कला में अच्छे प्रयोगधर्मी कलाकारों ने नई रचनायें स्थापित की हैं। यहाँ तक कि युवा कलाकारों का कार्य भी कम सराहनीय नहीं है। उनमें भी सृजन की अपार लालसा एवं गाम्भीर्य विद्यमान है। प्रत्येक युग की कला में प्रयोग विकास की प्रक्रिया के पोषक होते हैं। आज की समकालीन कला में आज के प्रयोग पुराने पड़कर भविष्य की कला को नई प्रेरणा अवश्य प्रदान करेंगे। यह सतत् चलने वाली प्रक्रिया है, जिसका सदैव महत्व बना रहेगा''[33]

भारतीय सभ्यता, संस्कृति एवं राजनैतिक समाज में चित्रकला का अपना एक विशिष्ट स्थान व महत्व है। समाज के सुसंस्कृत बनाने व उसके विकास में चित्रकला अप्रत्यक्ष रूप से महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। कला का उद्देश्य समाज को संवेदनशील एवं सुहृदयी बनाना है। सामाजिक संकट के समय में चित्रकला विभिन्न रूपों व माध्यमों के द्वारा समाज को ऊर्जा देती है। समय के साथ चलने एवं उसके द्वारा उत्पन्न समस्याओं से लड़ने की क्षमता बढ़ाती है। अतः संस्कृति व कला का क्षेत्र वहाँ तक है जहाँ तक विश्व व मानवता का फैलाव है।

कला के विकास के साथ ही उसकी समस्यायें व चुनौतियां भी बढ़ रही हैं, जो कला से सरोकार रखने वाले लोगों के लिये चिंतन का विषय है। आज जो समस्यायें व चुनौतियां चित्रकला के क्षेत्र में दिखाई दे रही है। उसका मुख्य कारण समकालीन कला तथा समाज के बीच का अन्तर। समकालीन कला समाज से दूर होती जा रही है, जिसका कारण समकालीन कला की जटिलता तथा क्लेष्टता है। औद्योगिक एवं वैज्ञानिक समाज में कला के प्रति उदासीनता का एक मुख्य कारण 'समय' है। आज की इस तेज रफ्तार जिन्दगी में व्यक्ति के पास समय नहीं है कि वह चित्रों को देखे और उसे समझने की कोशिश करे। ऐसे में वे चित्र ही अधिक कारगर होते हैं, जिनमें सरलता एवं आकर्षण हो। कला के समुचित विकास व गतिशीलता के लिये ये आवश्यक है कि कला समीक्षक और कलाकारों को कला जगत की समस्याओं और सम्भावनाओं का पूर्ण ज्ञान हो। कला जगत में भ्रष्टाचार, बाजारीकरण एवं व्यावसायिकता मुख्य समस्याओं के रूप में उभर रहीं हैं।

चित्रकला जगत में फैली हुई समस्याओं और उन्हीं से पैदा हुई चुनौतियों को दो धरातल पर देखा जा सकता है। पहला व्यावहारिक और दूसरा आध्यात्मिक यानी रचनात्मक।[34]

आज का समकालीन कलाकार, कला बाजार में अपनी जगह बनाने व चित्र बनाने की सोचता है। उसके पूरे काम के पीछे अब यही मानसिकता होती है। उसके काम कलात्मक दृष्टि से उत्कृष्ट हो न हो बाजार की दृष्टि से वे चल निकलने वाले होने चाहिए। युवा चित्रकार इस दौड़ में सबसे आगे है। उनके काम को किस प्रकार बड़ा सा बड़ा बाजार मिले इसी कोशिश में लगे रहते है। विश्व कला बाजार की ओर उन्मुख होने का एक प्रमुख कारण भौतिकवादी दृष्टिकोण तथा बेरोजगारी है। कलाकार स्वयं की आवश्यकता की पूर्ति के लिये विश्व–बाजार की ओर रूख करता है। कला के प्रति उनकी प्रतिबद्धता, कला की सामाजिक भूमिका, कलाकृतियों से आनन्द की अनुभूति प्राप्त करना आदि बातें उनके लिये बेमानी है। जो कलाकार विदेशी बाजारों में नहीं पहुंच पाये हैं। वे भारतीय कला बाजार में ही स्थान बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं।[35] कला बाजार ने कला कर्म की गंभीरता उसके उद्देश्य को खत्म कर व्यावसायिकता का विकास किया है। ऐसा नहीं है कि सभी कलाकार ऐसा करना चाहते हैं किन्तु जो चित्रकार कलात्मक सौन्दर्य या उसकी सामाजिक सांस्कृतिक भूमिका को ध्यान में रखकर कार्य करते हैं उन्हें उपेक्षा की दृष्टि से देखा जाता है, यह एक कटु सत्य है।

समकालीन कला जगत में राजनैतिक तथा जातिवादी प्रवृत्तियों ने भी सेंध लगा दिया है। इस घातक प्रवृत्ति को ठेकेदारी प्रथा भी कहा जा सकता है। जातीय प्रतिष्ठा स्थापित करने तथा जाति का वर्चस्व स्थापित करने की होड़ सी लगी हुई है। देश के विभिन्न क्षेत्रों की तरह कला जगत में भी इस कुप्रथा का विकास हो रहा है। जिससे आने वाली कलाकार पीढ़ी के सामने पहचान की चुनौती तथा काम की समस्या का संकट बढ़ रहा है, उनकी प्रतिभा भी कुंठित हो रही है। इसके अतिरिक्त कला जगत की जो महत्वपूर्ण समस्या सामने दिखाई देती है। वह है, सम्यक तरीके से कला–शिक्षण की।

कला की बेहतर शिक्षा के लिये, सम्यक पाठ्यक्रम समय–समय पर कला के विभिन्न पक्षों को लेकर महत्वपूर्ण चित्रकारों, कला समीक्षकों, कलाविदों के भाषण, कला शिक्षकों के नियुक्तियों के नियमों में परिवर्तन, अर्हताओं के नियमों में परिवर्तन, शिक्षण, संस्थाओं में कला का वातावरण, छात्रों–शिक्षकों, कला विशेषज्ञ, अतिथियों में संवाद, कलाकार बनते युवाओं के काम का दो–तीन महीनों में प्रदर्शन, कला छात्रों को कुछ समय के लिये संस्थान की ओर से विभिन्न कला संग्रहालयों में भेजा जाना, कला शिक्षकों की नियुक्ति में काम व योग्यता का संतुलन बनाये रखना, नियुक्तियों के लिये एक्सपर्ट्स प्रदेश के बाहर से बुलाया जाना आदि–इत्यादि। इन तरीकों के लिये कठोरता किस प्रकार बरती जाय यह एक बड़ी समस्या भी है और चुनौती भी।[36]

अगर शिक्षकों के चुनाव का तरीका गलत होगा तो शिक्षक योग्य व ईमानदार नहीं मिलेंगे तो कला–विद्यार्थी अच्छे कलाकार नहीं बन सकेंगे और कलाकारों सहित कला का कोई वातावरण नहीं रह जायेगा।

कला के विकास तथा प्रचार–प्रसार का एक अच्छा माध्यम पत्र–पत्रिकायें हैं। वर्तमान समय में हिन्दी में कला–केन्द्रित पत्र–पत्रिकाओं का अभाव कला के विकास को प्रभावित कर रहा है। कुछ एक को छोड़कर कला केन्द्रित जो पत्रिकायें निकलती हैं उनमें कोई नियमितता नहीं है। पत्र–पत्रिकायें आमतौर पर एक सार्थक व रचनात्मक मंच का काम करती हैं। विश्व के कला आन्दोलनों, कला सम्बन्धित समाचारों को कला में रूचि लेने वाले व्यक्तियों तथा कलाकारों से परिचित करती हैं। इससे कला के क्षेत्र में निरन्तर हो रहे नये–नये प्रयोगों तथा कला शैलियों का ज्ञान होता है। कलाकारों में उत्साह व ऊर्जा पैदा होती है तथा वे अपने काम में नवीनता लाने का प्रयास करते हैं। ''इससे कलाकार दोहराव से बचते हैं और कलाकर्म की सामाजिक भूमिका का निर्वाह कर पाते हैं, क्योंकि किसी बड़े चित्रकार ने यह घोषणा की थी कि कोई कलाकार अगर अपने को दोहराने लगता है तो एक प्रकार से कला जगत में उसकी समाप्ति हो जाती है।''[37]

कला जगत के सामने यह एक बड़ी चुनौती है कि कलाकारों तथा कला विद्यार्थी के लिये उपयोगी पत्र–पत्रिकाओं को किस प्रकार निकाला जाये। कला जगत में पैदा हो रही नित नई समस्यायें एवं चुनौतियां कलाकार वर्ग तथा कला–संस्थानों को प्रभावित कर रही है। जो कला कर्म की गंभीरता तथा विकास के लिये घातक है। आज युवा कलाकार के सामने बाजार की शर्तें तथा कला के बाजारीगकरण ने कई तरह की परेशानियां पैदा कर दी है जो उसकी रचनात्मकता को प्रभावित कर रही है। परन्तु भौतिक जीवन तथा आध्यात्मिक उत्पाद के लिये पैसों की जरूरत पड़ती है। अतः कलाकार बाजार की उपेक्षा भी नहीं कर सकता है।

अनेक कलाकार भारतीय कला की विभिन्न प्रवृत्तियों, माध्यमों, परम्पराओं और प्रयोगों का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। यह समय भारतीय समकालीन कला की समृद्धि, उपलब्धि और उत्कर्ष का समय है जिसे अनदेखा नहीं किया जा सकता। लेकिन इसी के साथ यह विडंमबना भी जुड़ी है कि समकालीन भारतीय कला में अन्तर्राष्ट्रीय दबावों के कारण चमत्कार प्रियता बढ़ी है। कला में आ रही व्यवसायिकता ने भारत ही नहीं पूरी दुनिया को प्रभावित किया है। पैसों की आमद ने कला के बुनियादी दायित्वों को प्रभावित किया है, और इसी के समानान्तर अपने समय तथा समाज की वास्तविकताओं से उसकी दूरी बढ़ी है। किन्तु अनेक देशों के कलाकारों ने इसको पहचान कर इसका विरोध करना शुरू कर दिया है।[38]

कला एक आन्दोलन : समीक्षावाद

समकालीन भारतीय चित्रकला का स्वरूप भारतीयता से दूर पाश्चात्य चित्रण परम्परा पर आधारित होती जा रही है। जो भारतीय आधुनिक चित्रकला के भविष्य के लिये गम्भीर समस्या उत्पन्न कर रही है। पाश्चात्य अन्धानुकरण ने भारतीय आधुनिक चित्रकला के अस्तित्व को खतरे में डाल दिया है। यदि चित्रण विधि का यही स्वरूप आगे लगातर चलता रहा तो भारतीय कला के तत्व भविष्य में समाप्त हो जायेंगे। भारतीय परम्परागत चित्र एवं संस्कृति का लोप हो जायेगा। कला समाज से दूर हो जायेगी तथा बुद्धजीवियों एवं कलाकारों तक सीमित हो जायेगी। इस विषम समस्या पर कलाकार एवं कला चिन्तकों, समीक्षा शास्त्रियों ने विचार विमर्श किया, पाश्चात्य कला के प्रभाव से मुक्त होने का निश्चय किया। और भारतीय कला के विकास एवं अपनी मौलिक कला के लिये ''समीक्षावाद'' नामक आन्दोलन चलाया। सर्वप्रथम प्रो0 राम चन्द्र शुक्ल, जो बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस में चित्रकला के विभागाध्यक्ष थे, के नेतृत्व में एक संगठन सन् 1972 में स्थापित किया। जिसमें सम्पूर्ण भारत के क्रियाशील चित्रकारों ने सहयोग किया। भारत के अनेक समकालीन चित्रकारों ने भारतीय चित्रकला के मूल स्वरूप को पुनः स्थापित करने के उद्देश्य से समीक्षा के दृष्टिकोण को अपनी चित्रकला में अपना लिया। समीक्षावाद जनकला आन्दोलन के रूप में कला–जगत में प्रचलित हो गया।

समीक्षावादी दर्शन का घोषणापत्र प्रो0 राम चन्द्र शुक्ल, श्री बालादत्त पान्डेय और प्रो0 गोपाल मधुकर ने तैयार किया और 15 नवम्बर 1973 को इस घोषणापत्र को प्रकाशित किया गया, जिसका आधार था – ''भारतीय चित्रकला'' मूर्तिकला और विभिन्न कलाओं में पाश्चात्य मूल्यों को अस्वीकृत किया जाता है और हम भारतीयता की सीमाओं में नव–कला के रूप को प्रतिपादित करेंगे।''[39]

समीक्षावादी चित्रों के विषय –

समीक्षावादी चित्रों के विषय लोक–भावना से प्रेरित है। समाज की वर्तमान समस्यायें, परिस्थितियाँ , विद्रूपतायें आदि प्रमुख विषय है। चित्रकार, साहित्यकार, कवि, लेखक, या अन्य कलाकार अपने जमाने के जागरूक प्रहरी होते हैं, उनका कार्य लोगों को सचेत करना एवं सामाजिक समस्याओं से चुनौती लेने की प्रेरणा देना है। कलाकार का काम आदर्श कल्पना लोक का निर्माण करना है, मनुष्य को समाज के प्रति समर्पित होने, राष्ट्र प्रेम, तथा प्रगतिशील बनने के लिए प्रेरित करना है।

देश तथा समाज की वर्तमान सामाजिक परिस्थितियों जीवन, समस्याओं, आर्थिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियाँ समकालीन विचार–धारा, भ्रष्टाचार, सामाजिक कुरीतियाँ आदि समीक्षावादी चित्रों के मुख्य विषय हैं।

समीक्षावादी चित्रकार –

समीक्षावादी कला आन्दोलन प्रगति पर है। भारतीय कलाकार सहर्ष इसे अपना रहे हैं। समीक्षावादी दृष्टिकोण अपनाने वाले कलाकारों में रवीन्द्र नाथ मिश्रा, ह्रदय नारायण मिश्र, संतोष कुमार सिंह तथा वीरेन्द्र आदि

हैं। रवीन्द्र नाथ मिश्र ने तीक्ष्ण रेखांकन से आतताइयों एवं पीड़ित मानवता का सशक्त चित्रण किया है। हृदय नारायण मिश्र ने अपने चित्रों में सामाजिक समीक्षायें प्रस्तुत की हैं। सन्तोष कुमार सिंह ने आन्दोलित युवा मानस की अभिव्यंजना के साथ व्यंगात्मक ढंग से सामाजिक भ्रष्टाचार पर बड़े पैन रंग और रेखाओं के माध्यम से अभिव्यंजना की है। वीरेन्द्र प्रताप सिंह ने लोक शैली का सहारा ले आज के असंगत जीवन की अपने चित्रों में प्रतीकात्मक ढंग से समीक्षायें की हैं। राम शब्द सिंह ने आधुनिक जीवन की अतिव्यस्तता और हृदय–हीनता के बीच गहरा एकाकीपन महसूस किया है और समीक्षात्मक ढंग से उसे अभिव्यंजित करने का प्रयास किया है।[40]बाला दत्त पान्डेय, राम चन्द्र शुक्ल तथा गोपाल मधुकर चतुर्वेदी समीक्षावादी कला आन्दोलन के प्रमुख एवं अग्रणी कलाकार हैं।

समीक्षावादी कला दर्शन के आधार स्तम्भ –

समीक्षावाद केवल चाक्षुष सौन्दर्य की कला न होकर एक सामाजिक कला आन्दोलन है इसका मुख्य आधार स्तम्भ निम्नलिखित है –

- ✓ सभी विदेशी कला आन्दोलनों की अस्वीकृति
- ✓ प्राचीनता के अन्धानुकर की अस्वीकृति
- ✓ व्यक्तिवादिता, द्विअर्थकतता, कठोरता, विपरीत कला आन्दोलन एवं रीतिवाद की अस्वीकृति
- ✓ कला भारतीयता का विकास
- ✓ कला के द्वारा सामाजिक क्रान्ति
- ✓ समाज के शोषकों के विरूद्ध
- ✓ सामान्य व्यक्ति की आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति
- ✓ असंगत सृजनात्मकता के विचारों की अस्वीकृति
- ✓ पाश्चात्य पद–चिन्हों पर चलने की अस्वीकृति
- ✓ शान्त भावनात्मक संदेशों की अभिव्यक्ति
- ✓ यथार्थ प्रतीकवादिता एवं समीक्षा के पक्षधर
- ✓ सुधार क्रान्ति, केवल सौन्दर्य आनन्द के ही नहीं सत्य के भी पक्षधर
- ✓ भारतीय सभ्यता, कला एवं समाज के पोषक आदि।[41]

(उपरोक्त समीक्षावादी आधार स्तम्भ हिन्दी अनुवाद है)

समीक्षावादी चित्रों की विशेषतायें –

समीक्षावादी चित्रकारों ने समाज में व्याप्त कुरीतियों, समस्याओं, राजनैतिक एवं सामाजिक भ्रष्टाचार एवं विद्रूपताओं को चित्रण का विषय बनाया है। वे इन विषयों के द्वारा समाज में व्याप्त समस्याओं को साधारण मनुष्यों तक पहुँचाने तथा समाज को स्वस्थ, समृद्ध तथा मानवीय गुणों से परिपूर्ण समाज का निर्माण करना इनका मुख्य उद्देश्य है। प्रतीकात्मक एवं व्यंगात्मक किन्तु सरल, सुबोध एवं स्पष्टता को आधार मानकर भारतीय कला को अलग पहचान देना है। समीक्षावादी चित्रों में तकनीक की अपेक्षा विषय को प्राथमिकता दी गई है तथा इन्हें पाश्चात्य प्रयोगों से मुक्त रखा गया है। समीक्षावादी चित्रों में दृष्टा के मस्तिष्क पर पड़ने वाले प्रभाव पर अधिक जोर दिया गया है। समीक्षावादी चित्रों की कलात्मक भाषा बहुत ही सरल है जो सामान्य व्यक्तियों की समझा में आसानी से आ जाती है। समीक्षावादी चित्र आधुनिक कला प्रवृत्तियों की अपेक्षा समकालीन समाज, जन–जीवन, आकांक्षा तथा अपेक्षाओं पर आधारित है। समीक्षावादी चित्रों में रंगों को भी प्रतीकात्मक रूप में प्रयोग किया गया है।

जब–जब किसी देश में सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनैतिक एवं आर्थिक जीवन में समस्यायें बढ़ जाती हैं तब सामाजिक सुधार एवं देश के प्रति निष्ठा और श्रद्धा को व्यक्त करने के लिए कला एवं कलाकार इन समस्याओं को अभिव्यक्ति का माध्यम बनाता है। तब कला का नया रूप प्रकट होता है और यह सामाजिक परिवर्तन का एक सशक्त हथियार बन जाती है। कलाकार अपने चित्रों के माध्यम से मूक विरोध करता है तथा जनता को जागरूक करने का कार्य करता है। सामाजिक परिवर्तन एवं मानवीय समस्याओं को ध्यान में रखकर समीक्षावाद का जन्म हुआ।

सन्दर्भ सूची

1. त्रिआयामी वर्ष 2010, विश्व भारती कला निकेतन, पृष्ठ 3
2. त्रिआयामी वर्ष 2010, विश्व भारती कला निकेतन, पृष्ठ 4
3. सौन्दर्य – डॉ राजेन्द्र प्रसाद, पृष्ठ 31
4. सौन्दर्य – डॉ राजेन्द्र प्रसाद, पृष्ठ 128
5. सौन्दर्य – डॉ राजेन्द्र प्रसाद, पृष्ठ 129–130
6. सौन्दर्य – डॉ राजेन्द्र प्रसाद, पृष्ठ 111–112
7. समकालीन कला, ललित कला अकादमी नई दिल्ली, पृष्ठ 15
8. समकालीन कला, ललित कला अकादमी नई दिल्ली, पृष्ठ 16

9. समकालीन कला, ललित कला अकादमी नई दिल्ली, पृष्ठ 17
10. कला त्रैमासिक, अप्रैल से जून 2000, राज्य ललित कला अकादमी उ0 प्र0 पृष्ठ 23
11. कला त्रैमासिक, अप्रैल से जून 2000, राज्य ललित कला अकादमी उ0 प्र0 पृष्ठ 23
12. समकालीन कला, ललित कला अकादमी नई दिल्ली, पृष्ठ 26
13. समकालीन कला, ललित कला अकादमी नई दिल्ली, पृष्ठ 26
14. समकालीन कला, ललित कला अकादमी नई दिल्ली, पृष्ठ 27
15. समकालीन कला, ललित कला अकादमी नई दिल्ली, पृष्ठ 27
16. विजन एण्ड डिजाइन –रोजन फ्राई, पृष्ठ 4
17. कला त्रैमासिक अप्रैल से जून 2002, राज्य ललित कला अकादमी उ0 प्र0 पृष्ठ 13
18. कला त्रैमासिक अप्रैल से जून 2002, राज्य ललित कला अकादमी उ0 प्र0 पृष्ठ 13
19. कला त्रैमासिक अप्रैल से जून 2002, राज्य ललित कला अकादमी उ0 प्र0 पृष्ठ 14
20. सौन्दर्य – डॉ राजेन्द्र प्रसाद, पृष्ठ 57
21. कला दीर्घा, अक्टूबर 2000, पृष्ठ 54
22. कला त्रैमासिक अप्रैल से जून 2000, राज्य ललित कला अकादमी उ0 प्र0 पृष्ठ 14
23. सौन्दर्य – डॉ राजेन्द्र प्रसाद, पृष्ठ 28
24. सौन्दर्य – डॉ राजेन्द्र प्रसाद, पृष्ठ 112
25. कला दीर्घा, अक्टूबर 2003, वर्ष 4 अंक 7, पृष्ठ 17
26. कला दीर्घा, अक्टूबर 2003, वर्ष 4 अंक 7, पृष्ठ 23
27. कला दीर्घा, अक्टूबर 2003, वर्ष 4 अंक 7, पृष्ठ 23
28. कला दीर्घा, अक्टूबर 2003, वर्ष 4 अंक 7, पृष्ठ 23
29. कला दीर्घा, अप्रैल 2001, पृष्ठ 57
30. आर्ट एण्ड सोसाइटी – सर हर्बर्ट रीड, पृष्ठ 66
31. कला सिद्धान्त एवं परम्परा – प्रो0 बी0 एल0 सक्सेना, डॉ0 श्रीमती सुधा सरन, डॉ0 आनन्द लखटकिया, पृष्ठ 6
32. कला दीर्घा, अप्रैल 2003, वर्ष 3 अंक 4, पृष्ठ 30
33. कला दीर्घा, अप्रैल 2003, वर्ष 3 अंक 4, पृष्ठ 30
34. कला दीर्घा, अक्टूबर 2002, वर्ष 3 अंक 5, पृष्ठ 7
35. कला दीर्घा, अक्टूबर 2002, वर्ष 3 अंक 5, पृष्ठ 8
36. कला दीर्घा, अक्टूबर 2002, वर्ष 3 अंक 5, पृष्ठ 11
37. कला दीर्घा, अक्टूबर 2002, वर्ष 3 अंक 5, पृष्ठ 11
38. कला दीर्घा, अक्टूबर 2001, पृष्ठ 27
39. कला सिद्धान्त एवं परम्परा – प्रो0 बी0 एल0 सक्सेना, डॉ0 श्रीमती सुधा सरन, डॉ0 आनन्द लखटकिया, पृष्ठ 159–160
40. समीक्षावाद – राम चन्द्र शुक्ल, पृष्ठ 9
41. समीक्षावाद – राम चन्द्र शुक्ल, पृष्ठ 146